सलाख़ें

आनंद कुरेशी

सलाखें

कहानी-संग्रह

आनंद कुरेशी

मेरी कहानियां

कदाचित् मेरे साथ पैदा होने का वह मक़सद ही ग़लत साबित हो गया, -जिसे घर का एकमात्र चिराग़ होने के कारण परिवार और अपने प्रति बहुत जिम्मेदारी निभानी थी।

छत्तीस साल की उम्र में आज भी मैं दूसरों की निगाहों में संजीदा नहीं हो पाया हूं। उस आदमी को आप क्या कहिएगा, जिसे इस पूरे देश में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला जिसकी तस्वीर को वह श्रद्धा से सिर झुकाये। जिसने एक आदर्श के पीछे खुदीराम बोस और भगतसिंह जैसे नौजवानों को हंसते-हंसते फांसी के तख़्ते पर चढ़ते नहीं देखा। उसने उन सरमाया-दार कहे जाने वाले लोगों को ही देखा है, जिन्होंने हकदारों का हक़ मार-कर अपने भाई-भतीजों को बनाया है। इसी कुचक्र में अपनी मेधा, अपना सारा आदर्श गटमट कर दिया उसने। व्यवस्था और व्यवस्था के नियामकों के प्रति उसके दिल में आस्था नेस्तनाबूद हो गयी।

यही कारण है कि ज़िन्दगी के प्रति कहीं-कहीं ऊब, वितृष्णा, कहीं-कहीं विद्रोह···मेरी कहानियों में परिलक्षित होता है।

उस आदमी को आप क्या कहिएगा-जो हर बार गिरा हो और हर बार किसी सफलता की आशा में राजहंस की तरह सजग और गर्दन उठाए चल पड़ा हो।

मेरी अब तक की ज़िंदगी और मेरी कहानियां इसी उठने-गिरने की बदनाम दास्तान

हैं।

पेट की परेशानी और दिमाग़ की चोटों ने एकजुट होकर दिल नाम की चीज़ को दफ़नाने की बहुत बार कोशिश की है-लेकिन अपनी वेदना को नियन्त्रित कर हर बार उसे भरसक बचाया है।

मेरी कहानियां इसी जद्दोज़हद का परिणाम हैं। मेरी कहानियों में मेरा रचनाकार हर जगह मौजूद है-जो इस यातनामय सफ़र में मेरा हमराह और मददगार भी है।

अपनी कहानियों में मैंने अपने कहे जाने वाले बेबफ़ा दोस्तों को कहीं न कहीं मांस-मज्जा-लहू देने की कोशिश की है। मुझे अपने लिए मर गया मानने वाले ये लोग मेरी यादों के सहारे खुद अमृत-बूटी सूंघ रहे हैं।

कितनी दर्दनाक बात है कि हमें ऐसे समाज में ज़िन्दा रहना पड़ता है जिसकी ओछी मान्यताओं को हम पसन्द नहीं करते हैं। इससे भी दर्दनाक बात तो यह है कि हमें देर-सबेर घुटने टेकने के लिए बाध्य किया जाता है। यदि हम ऐसा नहीं करते तो हमें नीच चरित्र तक क़रार कर दिया जाता है।

मेरी मजबूरी है कि तिरस्कार कैसा भी हो मैं भूल नहीं सकता। और यह मैंने कहीं-कहीं दिखाया भी है। जब दूसरे लोग मुझे छोटा या घृणित समझते हैं-तब मेरा स्वाभिमान ही है कि गर्दन उठाकर चलता है।

शरतचन्द्र, प्रेमचन्द, सआदत हसन मन्टो, निर्मल वर्मा, कमलेश्वर, आलमशाह

खान, ममता कालिया, मन्नू भण्डारी, मिथिलेश्वर-मेरे पसन्दीदा कथाकार हैं। फ़िक्र तौंसवी, श्रीलाल शुक्ल, हरिशंकर परसाई के व्यंग्य से प्रभावित हूं।

बहुत कम मैंने लिखा है, न शिव न सुन्दर। मैं छोटा, मेरे क़दम छोटे-मुझे तो अपनी जमीन तक का भी पता नहीं। हां, कुछ महानुभाव हैं जिनका स्नेह पाकर मैंने खड़े होने का साहस किया है -सर्वश्री रमणलाल जैन, सत्यनारायण व्यास, डा० कैलाश जोशी, सुमति प्रकाश जैन, हेमन्त एम० सोलंकी और किशनलाल गर्ग।

भाई श्री वेदव्यास जिन्होंने मुझे एक नई ज़मीन दी, नई ताक़त दी-प्रतिदान में मेरे लेखन का संसार एहसान चुका सके ऐसी ताक़त मुझे पाठकों की सहृदयता से ही प्राप्त हो सकेगी।

संकलन आपके हाथों में है। इस संकलन में ताज़ा कहानियों के साथ मैंने अपनी प्राथमिक कहानियों को इसी कारण चुना है कि आप मेरे रचना-विकास का मूल्यांकन कर सकें। इति।

-आनंद कुरेशी

12.7.83

अनुक्रमणिका

सलाखें	6
अल-फ़ातेहा	24
जागते रहो	31
एक क्लर्क की वापसी	38
चलते-चलते	50
भीड़	58
हड़ताल जारी है...	63
एक और मौत	72
अभाव की आग	80
प्रतिशोध	87
गलालैंग	96
जीने की राह	106
दरवाजा बंद कर दो	113
वापसी	122
सुमति	129
मास्टर झुमकलालजी	138
घीसूलाल ने अनशन किया	144
बैसाखी	158
फूल गुलाब का	164

सलाखें

-"जूते इधर रख!" सन्तरी दहाड़ा।

उसने चुपचाप जूते उतार दिए।

भीतर देखा, दरियों पर लेटी पन्द्रह-बीस जोड़ी आंखें एकटक उसी पर केन्द्रित थीं। सांस घुट आई। प्राण हलक तक आ गए। बढ़ी हुई दाढ़ी वाले, छितराए बालों वाले, मैले-कुचैले कपड़ों वाले, झबरीली मूंछों वाले, पीले-पीले दांतों वाले, बेतरतीब चेहरे उसके भीतर आने की प्रतीक्षा कर रहे थे।

-"गंगाराम, इसका बिस्तर निकाल दो-" बन्द लोहे की भारी-भरकम फाटक की सुराख से हेड सन्तरी बोला।

-"निकाल लिया।" भीतर पहरे पर तैनात सन्तरी बोला।

-"संभालो अपना बिस्तर!''

एक दरी, एक कम्बल, एक चादर-एक-एक कर सन्तरी ने बिस्तर कही जाने वाली सामग्री फेंकी। कम्बल पकड़ते हुए यह गिरते-गिरते बचा।

फिस्स... कोई दबी हंसी हंसा भीतर। एक कहकहा कोठरी में व्याप्त हो गया। वह सकपका गया।

-"चुप करो सुअरो! मार-मार कर चटनी बना दूंगा।"-संतरी दहाड़ा, सब चुप हो